EAST & WEST ACADEMY

WORLD HISTORY

औद्योगिक क्रान्ति की वैज्ञानिक एवं तकनीकी "प्रौद्योगिकी" पृष्ठभूमि यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति की क्रमिक अवस्थाएँ:

वर्ष 1750 से 1850 के बीच की शताब्दी, मानवीय इतिहास का एक ऐसा काल खण्ड था जिस दौरान वैज्ञानिक अन्वेषण के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में गहन शोध अनुसंधान किये गये और गणित, भौतिकी, रसायनशास्त्र, जीव विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में महान उपलब्धियाँ हासिल की गयीं। वर्ष **1850** तक, विद्वानों-वैज्ञानिकों, द्वारा किये जा रहे अन्वेषण-अनुसंधान एक ऐसे बिन्दु पर आ पहुंचे थे, जहाँ विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे अनुसंधानों की उपलब्धियाँ एक दूसरे की पूरक बनने लगीं। विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में अर्जित किया जा रहा ज्ञान जो विखण्डित और परस्पर विरोधी प्रतीत होता था, अब परस्पर सम्बद्ध दीख पड़ने लगा और उनके अन्तर्सम्बन्धों ने एक सर्वथा नवीन महत्व प्राप्त कर लिया। नयी आशाओं-आकांक्षाओं से प्रेरित, वैज्ञानिकों ने सर्वथा निर्भीक होकर अब तक असम्बन्ध पड़े तथ्यों-आकड़ों के बीच अन्त सम्बन्ध ढूंढना प्रारम्भ कर दिया और उनके आधार पर व्यापक सार्वभौमिक सामान्यीकरण ॥या जेनरलाइजेशन॥ की दिशा में अग्रसर हुए। विज्ञान की यह एक महानतम उपलब्धि थी कि अपने शोध-अन्वेषणों द्वारा इसने अबतक अज्ञात रहे उन अन्तर्सम्बन्धों को अचानक उद्घाटित कर दिया जिससे भौतिक जगत के मूलगत सम्बद्धता को समझना एवं उनके संश्लिष्ट स्वरूपों का ज्ञान प्राप्त करना आसान होता गया।

न्यूटन ने गति का सम्बन्ध पदार्थ की मात्रा के साथ स्थापित किया तथा ब्रह्माण्ड की जटिल प्रक्रियाओं के मूल में कार्यरत गति के उन सामान्य नियमों को खोज निकाला जो सभी भौतिक वस्तुओं की गतिशीलता को नियमित निर्देशित करते हैं। लवाइजर ने प्राकृति की बनावट में विभिन्न तत्वों के रासायनिक प्रतिमानों ॥पैटर्न॥ के कार्यरत होने की सम्भावना प्रकट की। लेमार्क ने पौधों वनस्पतियों एवं जीव-जन्तुओं से सम्बन्ध तथ्यों आकड़ों के विशाल भण्डार को अपनी इस उपकल्पना के समर्थन में प्रस्तुत किया कि काल प्रवाह की निरन्तरता में उदविकास की एक धीमी प्रक्रिया सदैव क्रियाशील रही है जिसने जीव-जन्तुओं के स्वरूप को सरल स्तर से परिवर्तित कर जटिल एवं उच्च स्तर में पहुंचा दिया है। अतः सभी जवित प्राणियों के बीच एक खास किस्म का उदविकास अतः सम्बन्ध स्थापित किया जाने लगा। इन "सामान्य नियमों-सिद्धान्तों" की खोज, जो अब तक अन्वेषित विभिन्न प्रकार के विस्मयकारी एवं असम्बद्ध तथ्यों आकड़ों के पीछे छिपा था, विज्ञान के इतिहास में एक महान सीमा चिन्ह का घोतक है।

भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में न्यूटन द्वारा प्रतिपादित गति एवं भार के सिद्धान्त तथा रसायनशास्त्र के क्षेत्र में लेवोइजर द्वारा प्रस्तुत तथ्यों के सिद्धान्त को जोड़ कर परमाणु भार, थर्मोडायनामिक्स तथा गैसों के गतिक सिद्धान्त का अध्ययन किया गया। ऊर्जा के सम्बन्ध में खोजी गयी नयी धारणा कि वह ॥ऊर्जा॥ ताप, प्रकाश, ध्वनि या अन्य प्रेरक शक्ति का स्वरूप धारण कर सकती है जिसे रासायनिक या विद्युत रूपों में परस्पर रूपान्तरित किया जा सकता है। इसने विभिन्न विज्ञानों के बीच एक सर्वथा नये प्रकार के संश्लेषण को जन्म दिया। भौतिकी, यंत्र विज्ञान एवं रसायनशास्त्र के अध्ययन क्षेत्रों में ऊर्जा के स्वरूपों को

यह जानकारी एक सामान्य सूचक बन गया। ऊर्जा के संरक्षण का सिद्धान्त एक ऐसी अवधारणा था जिससे अत्यन्त व्यापक एवं दूरगामी निष्कर्ष निकाले जा सकते थे। वर्ष 1870 तक, गैसों के गतिक सिद्धान्तों ने भी, थर्मोडायनामिक्स (ताप गत्यात्मकता) के सिद्धान्तों को आण्विक संरचना एवं परमाणु भार के सिद्धान्तों से जोड़ना शुरू कर दिया। रासायनिक प्रक्रियाओं में ताप के रूपान्तरण को मापना सम्भव हो गया और इस तरह यह भी प्रमाणित होने लगा कि ऊर्जा और पदार्थ अन्तः सम्बन्धित ज्ञान के टुकड़े इस प्रकार आपस में तीव्रगति से जुड़ते जा रहे थे कि यह अवश्यम्भावित हो चला कि प्रकृति के सारे रहस्य खुल कर प्रकट हो जायेंगे।

सभी प्रकार की तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी खोजें वस्तुतः विज्ञान के विकास पर आधारित आश्रित रही है। इस सन्दर्भ में, जीवन एवं जगत के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास, औद्योगिक क्रान्ति सर्वप्रथम इंग्लैंड में ही क्यों घटित हुई ?

औद्योगिक क्रान्ति की शुरूआत सर्वप्रथम ग्रेट-ब्रिटेन में इसलिए सम्भव हो सकी क्योंकि वहाँ अन्य औद्योगिक राष्ट्रों की अपेक्षा औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ कहीं अधिक सुस्पष्ट रूप में विद्यमान थीं। इन परिस्थितियों-शर्तों को निम्नलिखित छह शीर्षकों के अन्तर्गत रखा जा सकता है- पूँजी, श्रम, तकनीकी, संसाधन, परिवहन एवं बाजार या बिक्री केन्द्र। पूँजी गहन एवं तीव्र गति औद्योगिकरण के लिए काफी मात्रा में पूँजी की आवश्यकता पड़ती है ताकि मशीन स्थापित किये जा सकें, फैक्टरी निर्मित की जा सके, श्रमिक एवं कर्मचारी प्राप्त किये जा सकें तथा कच्चा माल खरीदा जा सके। पूँजी की वह मात्रा इंग्लैण्ड में मौजूद थी जो सत्रहवीं एवं अठ्ठारहवीं सदी के दौरान ब्रिटिश वाणिज्य व्यापार ने सफलता पूर्वक आर्जित की थी; साथ ही, कृषि की पूँजीवादी व्यवस्था, जो खास तौर पर वर्ष 1740 के पश्चात चकबन्दी या बाड़ाबन्दी आन्दोलन के कारण उत्पन्न हुई थी उसने भी पूँजी निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इसके अतिरिक्त, बैंक ऑफ इंग्लैण्ड, ने भी ब्रिटिश पूँजी के उपयोग और निवेश को इस तरह नियंत्रित किया ताकि वह तीव्र गति से बढ़ती रहे, उसने सरकारी वित्त का अतीव कुशलता-दक्षतापूर्वक उपयोग किया तथा लन्दन मुद्रा बाजार के उदय के साथ एक ऐसा केन्द्र भी स्थापित हो गया जहाँ बैंक नोट एवं हुंडियों एव बट्टा निर्धारित किया जा सकता था तथा "शेयर" खरीदे और बेचे जा सकते थे। ब्रिटिश मुद्रा व्यवस्था चाहे वह सिक्के हो या कागजी मुद्रा अठ्ठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ के पश्चात सदैव अत्यन्त मजबूत बनी रही (केवल नेपोलियन के साथ हुए ब्रिटिश युद्ध एवं उसके बाद वाले संक्षिप्त कालावधि को छोड़कर) ठीक उसी समय जबकि उद्योगों के लिए वित्त की आवश्यकता गम्भीरतापूर्वक महसूस की जा रही थी "बैंक ऑफ फ्रांस" के साथ-साथ कई संयुक्त पूँजी वाले बैंको को वैधता प्रदान की गयी (1826) इसके बादवाले दशकों में, उद्योगों के लिए साझा निगमों का गठन होने लगा तथा उद्योग एव व्यापार के सभी क्षेत्रो के लिए वित्त प्राप्त करने की व्यवस्था को सरल एवं आसान बना दिया गया। यहाँ यह उल्लेख करना भी आवश्यक है कि इंग्लैण्ड में औद्योगिक पूँजी स्वतः निर्मित हुई अर्थात कोई उत्पादक विनिर्मिता अपनी छोटी सी पूँजी से प्रारम्भ करके मुनाफे के रूप में प्राप्त धन को पुनः अपने प्रतिष्ठान में लगाकर मूल पूँजी को विशाल बनाता गया।

(2) श्रम : उन्नीसवीं शताब्दी के नवीन ब्रिटिश-उद्योगों को अनेक स्रोतों से श्रमिक प्राप्त होते रहे। उस समय ब्रिटेन की जनसंख्या में वृद्धि हो रही थी। अठ्ठारहवीं शताब्दी में ही ब्रिटेन की जनसंख्या लगभग दुगुनी हो गयी थी और प्रवास गमन के लिए ब्रिटेन छोड़कर स्थानान्तरित हुए लोगों की खासी बड़ी संख्या के बावजूद पुन: उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही दुगुनी हो गयी। अठ्ठारहवीं शताब्दी में योरोपीय महाद्वीप से भी काफी संख्या में श्रमिकों का ब्रिटेन में आगमन हुआ था जबकि आइरिश मजदूर उन्नसीवीं शताब्दी में ब्रिटेन आये। सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि ब्रिटेन के उद्योगों को श्रमिकों की नियमित आपूर्ति के लिए पुरानी कृषि व्यवस्था का पतन एवं घेराबन्दी आन्दोलन तथा पूँजीवादी कृषि जिम्मेवार थी जिसने बड़ी संख्या में ग्रामीण श्रमिकों को बेरोजगार बनाया। तकनीकी (प्रौद्योगिकी) -अठ्ठारहवीं शताब्दी के अन्त एवं शताब्दी के प्रारम्भ में इंग्लैण्ड ने सभी तकनीकी प्रौद्योगिकी, उससे सम्बन्धित प्रक्रियाएँ एवं यन्त्र तथा मशीन विकसित कर लिये थे जो वृहत एवं भारी उद्योगों के लिए आवश्यक होते हैं। औद्योगिक विकास को त्वरित करने वाले कुछ बेहद महत्वपूर्ण आविष्कारों में प्रमुख थे- फ्लाइंग शटल (जॉन के 1773), स्पिनिंग जेनी (जेम्स हरग्रीव्स 1767), स्पिनिगम्यूल (सैमुअल क्राम्पटन 1779), पावर लूम (एडमण्ड कार्टराइट 1785) बेलनाकार सूती वस्त्र छपाई मशीन (थॉमस बेल 1785 रासायनिक ब्लीचिंग एवं रासानिक रंग आदि सभी वस्तुओं की खोज एवं आविष्कार अठ्ठारवीं शताब्दी के अन्त से पहले ही किया जा चुके थे। इन यंत्रों एवं अन्य आविष्कारों का प्रयोग भी सफलता पूर्वक जलशक्ति से चलने वाले उद्योगों या वाष्प-शक्ति से चलनेवाले उद्योगों में किया जाने लगा था।

धातु उद्योगों की कला भी लगभग ऐसा भी है। जलावन योग्य लकड़ी के बढ़ते अभाव के फलस्वरूप लोहा गलाने के लिए (चारकोल) काष्ठकोयला का इस्तेमाल प्रारम्भ हुआ तथा खनिज कोयले के इस्तेमाल के लिए भी प्रयोग किये जाने लगे। ध्यानतव्य है कि इंग्लैण्ड में सोलहवीं शताब्दी से ही खनीज कोयले के खनन निष्कासन की दर बढ़ती गयी। इंग्लैण्ड का लौह उत्पादन उद्योग, काष्टकोयला अभाव में, कुछ समय तक पतनोन्मुख रहा था किन्तु अठ्ठाहरवीं शताब्दी के मध्य से यह पुनः स्वस्थ एव विकासोन्मुख होने लगा जब डर्बी ने कोक ब्लास्ट की प्रक्रिया विकसित कर ली, साथ ही कई अन्य आविष्कारों एवं परिष्करणों को लौह उत्पादन में अपना लिया गया। जान स्मीटन का वायु पम्प (1760), रिवरबेकरी फर्नेस, पुडलिंग फर्नेस तथा रौलिंग मिल (ये सभी हेनरी कोर्ट एवं पीटर ओनियन्स द्वारा लगभग 1789 में विकसित किये गये) जेम्स वॉट द्वारा स्टीम हैमर तथा हण्टमैन द्वारा स्टील बनाने की प्रक्रिया (लगभग 1740) हॉट ब्लास्ट(नीएलसन 1829) आदि आविष्कारों ने भी इस दिशा में हो रही प्रगति को उत्प्रेरित किया। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक लौह का उत्पादन निरन्तर बढ़ती मात्रा में होता रहा जिससे (लौह से) नयी मशीनों का निर्माण भी तीव्र गति से हो रहा था। अनेक उत्साही लोग जलयानों और पुलों के निर्माण में लौह का इस्तेमाल करने की माँग कर रहे थे।

अठ्ठारहवीं शताब्दी में, पूर्वकाल की तरह ही, ऊर्जा-शक्ति के साधन स्रोत के रूप में जीवित वस्तुओं यथा मनुष्य, घोड़े, खच्चर आदि का व्यवहार होता था या फिर हवा एवं पानी की शक्ति का। इस क्षेत्र में नवागन्तुक वाष्प शक्ति चलित इंजनों का आविष्कार 1700 की पहले शताब्दी में ही चुका था किन्तु

इसका व्यवहार केवल जमींदोज खानों से पानी उलीचने के लिए ही किया जा रहा था। जेम्स वॉट के इंजन में काफी सुधार कर वर्ष 1769 में उसे "पेटेण्ट कराया" गया तथा वर्ष 177.. में उसका औद्योगिक इस्तेमाल प्रारम्भ हो गया। अब इस शर्त की कोई आवश्यकता न रह गयी कि किसी फैक्ट्री या मिल को नदी या तेज रफ्तार बहते जल स्रोत के निकट स्थापित किया जाय। वाष्प शक्ति चलित इंजन को नावों जलयानों में लगाया जाने लगा ‍(राबर्ट फुल्टन का क्लेरमोण्ट, 180.) तथा वर्ष 1814 में जार्ज स्टीफेन्सन ने रेलगाड़ी चलाने के लिए भी वाष्प शक्ति का सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया। जेम्स वॉट को अपनी प्रारम्भिक इंजन बनाने में काफी कठिनाईयों का सामना करना पड़ा था क्योंकि उस समय मशीन उपकरण एवं औजारों का बेहद अभाव था लेकिन बाद में यह कठिनाई दूर होती गयी तथा ड्रिल, लेथ, स्लाइड रेस्ट एवं स्टाम्पिंग प्रक्रियाओं का विकास कर लिया गया।

(3) संसाधन : इंग्लैण्ड उन संसाधनों की दृष्टि से भाग्यशाली रहा जिन संसाधनों की आवश्यकता औद्योगीकरण के लिए होती है। इंग्लैण्ड का जलवायु भी इतना आर्द्र या नमीयुक्त था जो मशीनों द्वारा कताई और बुनाई के लिए सहायक सिद्ध हुआ। जलशक्ति अत्यन्त प्रचुर मात्रा में इंग्लैण्ड में मौजूद था। सर्वोपरि बात यह थी कि इंग्लैण्ड में कोयला और लौह अयस्क अत्यन्त प्रचुर मात्रा में मौजूद था।

(4) परिवहन : अपने अनेक बन्दरगाहों एवं जलयानों की सुलभता के कारण इंग्लैण्ड जल-परिवहन की दृष्टि से अत्यन्त सुविधा सम्पन्न था। इसके साथ ही, उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के दौरान ब्रिटेन ने अपनी मध्ययुगीन आन्तरिक यातायात व्यवस्था को भी आधुनिक बनाने की दिशा में जोर-शोर से कार्य किया और सड़कों एवं नहरों का जाल-सा सारे ब्रिटेन में बिछ गया। चूँकि इंग्लैण्ड का कोई भी भू-भाग, समुद्रतट से साठ-सत्तर मील से अधिक दूर नहीं है, फलतः नव निर्मित सड़कों एवं नहरों के कारण अनेक नये शहर इंग्लैण्ड में जगह-जगह बस गये और उसके विकसित हो रहे व्यापार वाणिज्य में योगदान देने लगे।

(5) बाजार : इंग्लैण्ड तथा स्कॉटलैण्ड वर्ष 1707 के "एक्ट ऑफ यूनियन" के पश्चात चुंगी-शुल्क से मुक्त, खुले बाजार के रूप में घोषित किये जा चुके थे। इनके साथ आयरलैण्ड का एकीकरण वर्ष 1800 में सम्पन्न हुआ फलतः इंग्लैण्ड के उद्योगों को एक और स्वदेशी बाजार उपलब्ध हो गया। अट्ठारहवीं शताब्दी के मध्यकाल के पूर्व ही अंग्रेज व्यापारियों ने अपने व्यापार को सम्पूर्ण योरोप, उत्तरी अमेरिका, अफ्रिका तथा सुदूर पूर्व के देशों तक फैला लिया था उनका यह व्यापार इसके पश्चात भी दूर-दूर तक फैलता रहा। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, ब्रिटेन से स्वतंत्र होने के पश्चात् भी ब्रिटिश उत्पादित सामग्री खरीदता रहा। भारत में ब्रिटिश मालों की बिक्री अधिकाधिक बढ़ायी जाती रही, विशेषकर नये और सस्ते ब्रिटिश सूती वस्त्रों की। स्पेन के उपनिवेश फ्रांसीसी राज्यक्रान्ति एवं नेपोलियन द्वारा खोल दिये गए और जब वे 1820 के दशक में आजाद हुए तब ब्रिटेन ने वहाँ अपना व्यापार फैला दिया। सम्पूर्ण विश्व में, कैण्टन से लेकर ब्यूनस आयर्स तक तथा केपटाउन से लेकर उत्तरी अन्तरीप तक ब्रिटिश व्यापार फैला हुआ था और उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही उनका कोई दूसरा व्यापारिक प्रतिस्पर्द्धी मैदान में न था।

अतः वर्ष 1830 तक इंग्लैण्ड का वे सभी आवश्यक अनिवार्य परिस्थितियाँ उपलब्ध थे जो वृहत पैमाने पर औद्योगिक उत्पादन को तीव्र गति से बढ़ाने के लिए आवश्यक होते है। यौरोप के अन्य किसी देश की अपेक्षा इंग्लैण्ड औद्योगिक विकास की सभी शर्तों को पूरा करता था। सूती वस्त्र उद्योग एवं सामान्य वाणिज्य व्यापार में उसने पहले से ही बढ़त हासिल कर रखी थी। आगामी दशकों में वह वस्तुतः "विश्व का कारखाना" बनने जा रहा था। अतः इंग्लैण्ड को अपनी "औद्योगिक क्रान्ति" दौर से स्व-निर्मित एवं स्व-प्रचलित होकर गुजरना सम्भव हुआ। एक बार ज्योंही इंग्लैण्ड में फैक्ट्री उद्योग स्थापित हुए, यह गहन औद्योगिकरण की ओर वह तीव्र गति से चल पड़ा। गहन औद्योगिकरण एवं औद्योगिकरण विस्तार के लिए सुनिश्चित बिन्दु को तब पहुँचा जाता है जब कोई नया उद्योग इतनी तेजी से उत्पादन करे कि वह काफी बड़ी मात्रा में पूँजी उपलब्ध कराने लगे और इंग्लैण्ड इस बिन्दु पर वर्ष 1830 के आस पास पहुँच चुका था।

इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रान्ति की क्रमिक अवस्थाएँ (या चरण) :-

सर्वप्रथम जिस उद्योग में मशीनीकरण का प्रारम्भ हुआ - वह था सूती वस्त्र विनिर्माण उद्योग। इंग्लैण्ड का यह उद्योग आश्चर्यजनक गति से विकसित और विस्तृत हुआ। उदाहरण स्वरूप, वर्ष 1830 में मूल्यानुसार सूती वस्त्र का निर्यात 19 मिलियन पौण्ड स्टार्लिंग था। जो वर्ष 1870 में बढ़कर 56 मिलियन हो गया था। वर्ष 1821 में इंग्लैण्ड ने अमेरिका से 93,500,000 पौण्ड कच्चा कपास खरीदा जो 1860 तक बढ़कर "एक मिलियन" पौण्ड से भी अधिक हो गया। साथ ही, वर्ष 1871 में इंग्लैण्ड के सभी उद्योगों में कार्यरत कुल श्रमिकों का 80% केवल सूती वस्त्र उद्योग में कार्य कर रहे थे।

लौह उद्योग की प्रगति भी लगभग इतनी ही तीव्रता से हुई। "पिगआयरन" का ब्रिटिश उत्पादन वर्ष 1830 में 750,000 टन था जो वर्ष 1870 में बढ़कर छह मिलियन टन हो गया। इसी प्रकार, कोयले का उत्पादन वर्ष 1830 में 26 मिलियन टन था जो वर्ष 1870 में 110 मिलियन टन हो चुका था। धातु उद्योगों में भी बढ़त हासिल की गयी थी जिसकी सबसे बड़ी उपलब्धि थी, बड़े पैमाने पर लोहे को "स्टील" में बदलने की प्रक्रिया का परिष्करण। वर्ष 1836 में बेसमेर पद्धति की शुरुआत की गयी थी जो तीव्र गति से उत्पादन करने में सक्षम तो था ही, कम खर्चीला भी साबित हुआ। इस पद्धति ने रेल, जहाज एवं मशीनों के निर्माण के लिए स्टील उपलब्ध कराये जो साधारण लोहे की अपेक्षा कहीं अधिक मजबूत और टिकाऊ था। इसके लगभग तीन दशक पश्चात (वर्ष 1860 के दशक) पुनः 1870 के दशक में, थॉमस - गिलक्राइस्ट द्वारा विकसित पद्धति भी समन्वित कर ली गयी फलतः अधिक फास्फोरस युक्त लौह अयस्क से भी लोहे का निर्माण सम्भव हो चला।

इसी अवधि में, जूते बनाने, शराब चुआने, गेहूँ पीसने तथा फर्नीचर निर्माण जैसे उद्योग जो अबतक लघु एवं छोटे उद्योगों की गिनती में थे। उनमें भी फैक्ट्री संगठन एवं मशीनों का इस्तेमाल प्रारम्भ कर दिया गया। इसी प्रकार अस्त्र शस्त्र एवं गोला बारूद के उत्पादन में, नये आविष्कारों एवं मशीनीकरण के फलस्वरूप क्रान्तिकारी परिवर्तन हो गया। वर्ष 1862 में एक अमेरिकन सं. रा. रिचार्ड्गेलिंग

Scanned by TapScanner

ने "मशीनगन" का आविष्कार किया जो मात्र एक मिनट (या साठ सेकण्ड) में 350 गोलियाँ छोड़ सकता था। इस गैटलिंग बन्दूक (या मशीनगन) के मार्फत औद्योगिक क्रान्ति युद्ध के दौरान में भी आ पहुंचा।

पुराने उद्योगों के साथ-साथ नये उद्योगों की स्थापना का क्रम अनवरत चलता रहा। 1840 के दशक में बढ़ते हुए शहरी माँग, बढ़ती हुई वैज्ञानिक जानकारियों एवं टीन तथा शीशे के डिब्बों - बोतलों के कारण डिब्बा बन्द खाद्य सामग्री का उत्पादन आरम्भ हुआ। 1860 के दशक तक, ताजा फल, मछली एवं सब्जियों का डिब्बा बन्द उत्पादन खासे-बड़े पैमाने पर शुरू किया जा चुका था। गेल बारडेन नामक अमेरीकी ने कण्डेन्सड मिल्क (दूध) का पेटेण्ट करवाया और ठीक इसी वर्ष 1855 में सूखा दूध (ड्राइ मिल्क या "पाउडर दूध") इंग्लैण्ड में सबसे पहले बना लिया गया।

लोहा गलाने के लिए "कोक" का उत्पादन किया जाता था और इसी प्रक्रिया के क्रम में एक नया उद्योग भी विकसित हो गया क्योंकि कोक के उत्पादन प्रक्रिया में "कोल-गैस" निकलता है। वर्ष 1812 में लन्दन में एक गैस लाइटिंग कम्पनी की स्थापना हुई और भोजन पकाने के लिए गैस का इस्तेमाल वर्ष 1832 में प्रारम्भ हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्यकाल तक इंग्लैण्ड के अनेक सड़कों गलियों में गैस-प्रज्वलित प्रकाश था और अनेक घरों में गैस द्वारा भोजन पकाया जाता था।

लेकिन विद्युत उत्पादन के क्षेत्र में हो रहे वैज्ञानिक अनुसंधानों के कारण गैस प्रकाश का एक नया शक्तिशाली प्रतिस्पर्धी उत्पन्न होने वाला था। कार्बन "आर्क-लैम्प" तथा डायनेमो के फलस्वरूप वर्ष 1870 तक विद्युत प्रकाश सुलभ कराना सम्भव हो गया और केवल आठ वर्षों के पश्चात (वर्ष 1878 में) तापदीप्त बल्ब (लैम्प) का आविष्कार होते ही विद्युत प्रकाश का विस्तृत उपयोग सम्भव हो गया। इसी बीच, धातुओं पर विद्युतलेपन के लिए विद्युत का उपयोग बड़े पैमाने पर किया जाने लगा था (1850 के दशक में) और 1840 के दशक में टेलीग्राफ के तारों का जाल सम्पूर्ण योरोप में फैल चुका था। वर्ष 1866 में, अमेरिका तक समुद्र जल के नीचे टेलीग्राफ तार बिछ जाने के फलस्वरूप दूरस्थ देशों के बीच भी सूचनाओं को अतिशीघ्र भेजना सम्भव हो गया। इससे समाचार पत्रों की गुणात्मकता में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। ठीक इसी प्रकार सस्ते कागज के उत्पादन एवं वाष्प चालित यंत्रों द्वारा छपाई ने भी समाचार पत्रों की लोकप्रियता में योगदान किया।

वर्ष 1830 से वर्ष 1870 के बीच उत्पन्न हुआ एक अन्य नया उद्योग फोटोग्राफी का था। यद्यपि पहला फोटोग्राफ वर्ष 1822 में लिया जा चुका था किन्तु वह अति कच्चे किस्म का था। डगुरे नामक एक फ्रॉसीसी ने ही, फोटोग्राफी की प्रक्रिया को व्यावहार योग्य बनाया। वर्ष 1838 में, वह तीस मिनट के अन्दर फोटो उतारने में सक्षम हो गये। वर्ष 1841 में फौक्स टैलबट नामक अंग्रेज ने इससे भी तीव्र गति से फोटो उतारने की प्रक्रिया विकसित कर ली और इसके एक दशक बाद लगभग तत्काल फोटो उतरने की संभावना को समझ लिया गया। इसके बाद चित्रांकन (फोटोग्राफी) की यह नयी कला बेहद तेजी से एक विशाल औद्योगिक स्वरूप धारण करता गया।

रबड़ को और भी मजबूत एवं लचीला (एलास्टिक) बनानें के उद्देश्य से उसके "वल्कनाइजेशन" की प्रक्रिया, वर्ष 1839 में, एक अमेरिकी चार्ल्स गुडइयर ने ढूंढ़ निकाली और इस तुच्छ से दीखने वाले आविष्कार ने एक विशालकाय

उद्योग की नींव डाली। 1880 के दशक तक रबड़ से बनी चीजों में उत्पादनरत कारखानों की संख्या में खासी वृद्धि आयी लेकिन रबड़ का महानतम युग अभी थोड़ी दूर था। पेट्रोलियम पदार्थों के उत्पादन की कहानी भी इससे काफी मिलती जुलती है। जेम्स यंग ने नेप्था, लुब्रिकेटिंग तथा केरोसिन बनाने के लिए कच्चे पेट्रोलियम को स्रवण (डिस्टीलेशन) की विधि ढूंढ निकाली। धीरे-धीरे इन उत्पादित वस्तुओं को बाजार भी प्राप्त होने लगा। केरोसिन तो प्रकाश के लिए व्यवहार होने के कारण बेहद लोकप्रिय हो गया। वर्ष 1857 में पेट्रोलियम का सम्पूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय उत्पादन महज दो हजार बैरल था जो वर्ष 1370 में बढ़कर तीस मिलियन बैरल हो गया।

इस तरह एक नये पेशे का भी जन्म हुआ जो अभियंत्रण या इन्जीनियरिंग था। एक तरह से ये इंजीनियर या अभियन्ता उद्योग और विज्ञान के बीच संयोजक कड़ी का कार्य सम्पन्न करते रहे।

वर्ष 1830 से वर्ष 1870 के बीच, औद्योगिक क्षेत्र में हो रहे तीव्रगामी प्रगति से भी अधिक क्रान्तिकारी था परिवहन एवं यातायात की व्यवस्था को सुधारने-परिष्कृत करने के कार्यों की शुरुआत। वर्ष 1830 तक इस स्थिति में इतने बदलाव हो चुके थे जिनकी सामान्य लोगों ने कल्पना भी नहीं की थी क्योंकि अब समतल पक्की सड़कों एवं चमकदार रेलों पर लोग और माल तीव्र रफ्तार से दूर-दूर तक पहुँचाये जाने लगे। पहली वाष्प चालित रेलगाड़ी वर्ष 1885 में स्टॉकहोम और डार्लि के बीच चलायी गयी थी। वर्ष 1830 में लिवरपुल और मैनचेस्टर रेल-लाइन का उद्घाटन किया गया। राबर्ट स्टीफेंसन के उन्नत किस्म के रेल-इंजन "रॉकेट" के द्वारा चालीस मील की दूरी केवल नब्बे मिनट में तय की गयी। इस सफलता ने आगामी वर्षों में विस्तृत रेल पथ एवं इंजन तथा डब्बों के निर्माण की दिशा में जोरदार प्रेरणा दिया। वर्ष 1830 में वाष्प चालित रेल पथ का केवल 49 मील इंग्लैण्ड में मौजूद था जबकि वर्ष 1870 तक 15,300 मील रेल पथ निर्मित हो चुका था। रेल इंजनों को काफी उन्नत बना लिया गया था, निर्माण की बेहतर विधि खोजी जा चुकी थी तथा सुरक्षा एवं रफ्तार काफी बढ़ा ली गयी थी।

समुद्री परिवहन में हो रहे क्रान्तिकारी परिवर्तन की गति अपेक्षाकृत कुछ धीमी अवश्य थी। वर्ष 1836 में वाष्प शक्ति चालित दो जलयानों ने अटलांटिक महासागर पार किया जिसमें "सीरियस "नामक जहाज को 18 दिन लगे और "ग्रेट वेस्टर्न" को 15 दिन। इसके ठीक दो वर्ष पश्चात सैमुअल क्यनार्ड ने अटलांटिक के आर-पार नियमित स्टीमर सेवा के प्रथम कार्यक्रम का उद्घाटन किया। वर्ष 1830 तथा वर्ष 1870 के बीच ब्रिटीश जलयानों के भारवहन क्षमता में दुगनी से अधिक वृद्धि हो चुकी थी।

विज्ञान, उद्योगों एवं सस्ते परिवहन के सम्मिलित प्रभाव ने पहले कृषि को एक दिशा में प्रेरित किया तत्पश्चात दूसरी दिशा में। अठारहवीं शताब्दी के चकबन्दी बाड़ाबन्दी आन्दोलन तथा कृषि के नये तरीकों ने ब्रिटिश कृषि व्यवस्था को व्यापक पैमाने पर परिवर्तित कर डाला। लाभ कमाने के उद्यम ने यंत्रों मशीनों को कृषि-कार्य में प्रयुक्त करने की प्रेरणा दी। फलतः श्रम पर होने वाला खर्च आश्चर्यजनक रूप से घट गया। वर्ष 1853 में "मैकसीक्कल रीपर" का अमेरिका (सं. रा.) से आयात किया जाने लगा। लेकिन उर्वरकों की दिशा में हेड्विग द्वारा किये गये कार्यों का व्यवहारिक प्रभाव पड़ा। चूने के सुपरफास्फेट का उत्पादन, वर्ष 1846 में इंग्लैण्ड में प्रारम्भ हो गया। सोडा के नाइट्रेट का

इस्तेमाल बढ़ने लगा और पेरू से "गुआनो" का आयात प्रारम्भ हो गया। जैसे-जैसे जैविक एवं रासायनिक कृषि का युग परिपक्व होने लगा, जमींदारों का फसलोत्पादन बढ़ने और लागत घटने लगा।

यूरोपीय महाद्वीप में औद्योगिकरण का विस्तार :-

यूरोपीय महाद्वीप से इंग्लैण्ड का इतना घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध था कि इंग्लैण्ड में हो रहे औद्योगिकरण का प्रभाव यूरोप पर पड़ना अनिवार्य एवं अवश्यम्भावी था। अट्ठारहवीं शताब्दी की उत्तरकालीन अवधि में कुछ मशीनें, जैसे आर्कराइट किस्म के जल ढाँचे, छिटपुट रूप से फ्रांस एवं बेल्जियम में स्थापित किये गये थे। लेकिन यूरोप में मशीनी उत्पादन की गति और विस्तार में वृद्धि वर्ष अठारह सौ पंद्रह (1815) के पश्चात ही हो सकी। औद्योगिकरण, जिसकी शुरुआत यद्यपि कुछ पहले ही हो चुकी थी, किन्तु अपना विकासोत्सव उसे वर्ष 1830 के बाद वाले दशकों में ही देखने को मिला। वर्ष 1870 तक, ब्रिटिश लागत और अभियंताओं की सहायता पाकर, बेल्जियम वस्तुतः फाउंड्रियों, फैक्ट्रियों एवं खानों का देश बन चुका था।

फ्रांस अपेक्षाकृत धीमा एवं सम्पूर्ण रूप से औद्योगिकृत हुआ। फ्रांस में दस्तकारी एवं हस्तकारी की परम्परा थी जो अति विलासी उत्पादन में संलग्न थी। वर्ष 1789 तक इस परम्परागत उत्पादन प्रणाली की मजबूत घेराबन्दी कर ली गयी थी। लम्बी लड़ाइयों के दौरान फ्रांस के दोनों उपनिवेश उसके हाथ से निकल चुके थे। कोकिंग कोयले का उसके पास यथेष्ठ भण्डार था किन्तु उसके अधिकांश लौह-अयस्क निम्नस्तरीय गुणवत्ता के थे। फिर भी, औद्योगिक क्रान्ति अपनी राह चीरता हुआ धीरे-धीरे फ्रांस में धसता फैलता गया। सर्वप्रथम इसने खनन एवं धातुकर्म उद्योग को प्रभावित किया। कोयले का उत्पादन वर्ष 1755 में 800,00 टन था जो वर्ष 1830 में 1800,000 टन हो गया तथा पिग आयरन का उत्पादन इसी अवधि में 100,000 टन से 300,000 टन हो गया।

वर्ष 1830 के पश्चात, लुई फिलिप की व्यापारिक मनोदृष्टि वाली सरकार की सहायता पाकर, और इसके पश्चात नेपोलियन तृतीय की आर्थिक सहायता एवं सहयोग पाकर, फ्रांस के उद्योग, ऊँची शुल्क की मजबूत चाहरदीवारी के बीच घिरकर पनपे। फ्रांस के उद्योगों के लिए, रेल-पथों का निर्माण और विस्तार, खास तौर पर उत्प्रेरक साबित हुआ। पेरिस को केन्द्र बनाकर सभी दिशाओं की ओर दूर-दूर जाते रेल-पथों के जाल ने फ्रांसीसी उद्योगों को विशिष्ट योगदान दिया।

वर्ष 1830 से वर्ष 1870 के बीच फ्रांस में कोयले का उत्पादन 1,800,000 टन से बढ़कर 16,000,000 टन हो गया और पिग आयरन का 300,000 टन से बढ़कर 1,400,000 टन। वर्ष 1840 के पश्चात, फ्रांस के सूती वस्त्र उद्योग में कार्यरत दस्तकारों की प्रतिस्पर्धा में शक्ति-चालित मशीनी वस्त्र उद्योग आगे निकल पड़ा किन्तु फ्रांस की जनसंख्या का अधिसंख्य अर्थात कृषि संलग्न ही था।

जर्मनी, अपने विशाल एवं लौह भण्डार संसाधनों के बावजूद, फ्रांस की अपेक्षा पिछड़ा हुआ था। इंग्लैण्ड, बेल्जियम और फ्रांस के विपरीत, जर्मनी में वास्तविक औद्योगिकरण से पहले, रेल-परिवहन निर्माण का उद्योग ही फूला-फला।

जर्मनी में कोयले का उत्पादन वर्ष 1850 में फ्रांस के मुकाबले कम था। लेकिन वर्ष 1860 में वह 16 टन हो गया और वर्ष 1870 में 37 मिलियन टन। वर्ष 1860 में पिग आयरन का उत्पादन पाँच लाख टन तक पहुँच गया जो 1870 में 2 मिलियन टन हो गया। लेकिन सूती वस्त्र उद्योग वर्ष 1870 तक जर्मनी में हस्त-उद्योग ही बना रहा। अभी तक (1870) जर्मन जनसंख्या का 64% ग्रामीण एवं कृषक की श्रेणी में रखा जाता था। औद्योगिकरण क्रान्ति के व्यापक प्रसार-विस्तार के परिणाम, वर्ष 1870 के पश्चात ही प्रकट हो सका।

यौरोप के अन्य स्थानों पर, वर्ष 1870 के पूर्व, वृहत पैमाने पर विनिर्माण की कारखाना व्यवस्था तथा औद्योगिक पूँजी का प्रकटीकरण केवल कुछ ही स्थानों पर ही पाया था। जहाँ -तहाँ कुछ औद्योगिकरण इकाईयाँ कार्यरत थीं लेकिन इंग्लैण्ड, फ्रांस, बेल्जियम एवं जर्मनी के अपवादों को छोड़कर शेष यौरोपीय महाद्वीप, वर्ष 1870 के पूर्व कृषि प्रधान समाज था जितना वह एक या दो शताब्दीयों पूर्व कृषि पर आधारित आश्रित था।

औद्योगिकरण के साथ संलग्न अन्य आयाम :

जनसंख्या वृद्धि : अट्ठारहवीं शताब्दी के पूर्व, लगातार कई शताब्दियों तक यौरोप की जनसंख्या या तो स्थिर रही या बेहद धीमी गति से बढ़ी थी। वर्ष 1700 में यौरोप की जनसंख्या 125 मिलियन से अधिक नहीं थी जबकि वर्ष 1800 में यह लगभग 187 मिलियन हो गयी तथा वर्ष 1850 तक 226 मिलियन तथा वर्ष 1900 तक 400 मिलियन। सामान्य तौर पर, पूर्वी यौरोप के अपवाद को छोड़कर जनसंख्या में हुई यह विशाल वृद्धि उन्हीं स्थानों पर हुई थी जिन स्थानों पर औद्योगिकरण हो रहे थे। जनसंख्या में हुई वृद्धि का मूल कारण मृत्यु दर में आई गिरावट था। जनसंख्या में वृद्धि की प्रक्रिया का सम्बन्ध भोजन एवं स्वास्थ्य सफाई की सुविधाओं में हुए सुधारों से था।

शहरीकरण : जनसंख्या की अधिकांश वृद्धि शहरी केन्द्रों में हुई थी, और शहरी केन्द्रों में बड़ी भारी तादाद में ग्रामीण क्षेत्रों से लोगों का आगमन हो रहा था। ग्रेट-ब्रिटेन में, लन्दन का विकास-विस्तार एक बड़े शहर के रूप में हुआ जिसके सामने अन्य ब्रिटिश शहर फीके पड़ गये। ब्रिस्टल एवं ग्लासगो जैसे पुराने शहर भी बढ़ते विकसित होते रहे, किन्तु नये शहर, जो 18 वीं शताब्दी तक महज ग्रामीण क्षेत्र था, अब घनी आबादी वाले व्यस्त शहरों की गिनती में आ गये जैसा कि लिवरपुल, लाइस, शैफील्ड या मैनचेस्टर या बरमिंघम के मामले में देखने को मिलता है। ऐसे परिवर्तन यौरोपीय महाद्वीप के अनेक क्षेत्रों में भी हुए तथा ब्रूसेल्स, पेरिस तथा बर्लिन जैसे शहरों का आश्चर्यजनक विकास-विस्तार हुआ। इनमें अतिरिक्त सैकड़ों की संख्या में छोटे शहरों का विकास महानगर के रूप में तथा ग्रामीण कस्बाई केन्द्रों का विकास छोटे शहरों के रूप में हुआ।

वर्ग संरचना : शहरों के उदय एवं विकास के साथ-साथ सामाजिक वर्ग संरचना में भी अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन स्पष्ट होने लगे। भूस्वामी एवं कृषक, व्यापारी एवं कारीगर जैसे पूर्वकालिक वर्ग तो मौजूद थे ही, अब उनमें नये वर्गीय विभाजन भी शामिल हो गये जिनमें सर्वप्रमुख था औद्योगिक पूँजीपतियों एवं मजदूरी-अर्जन पर निर्भर सर्वहारा वर्ग। वर्ष 1870 तक, इंग्लैण्ड का सबसे प्रमुख एवं सर्वाधिक जनसंख्या वाला वर्ग था फैक्ट्रियों में कार्यरत श्रमिकों का अर्थात सर्वहारा का जो सम्पत्ति के स्वामित्व से वंचित थे और दैनिक मजदूरी पर अपना गुजारा करने को विवश थे।

<u>श्रमिक वर्ग की स्थिति परिस्थिति</u> : औद्योगिकरण की नयी प्रक्रिया के अन्तर्गत, दैनिक मजदूरी पर निर्वाह करने वाले श्रमिकों के वर्ग की स्थिति किसी भी तरह खुशहाल नहीं कही जा सकती थी। फैक्टरी और खानों में कार्यरत श्रमिकों को दिन में बारह से चौदह घण्टे कार्य करना पड़ता था तथा उन मशीनों पर श्रम करना पड़ता था जो बेहद घटिया, असुरक्षित तथा अस्वास्थ्यकर वातावरण में उत्पादन प्रक्रिया पूरी करते थे। यदि कोई श्रमिक खान में काम करता था तो दिन के अधिकांश घंटे उसे जमीन के नीचे रहना पड़ता था और दिन में सूर्य उसे शायद ही देखने को भी मिलता था। फैक्ट्री और खानों की सीटियों की आवाज देर से पहुंचने या अनुपस्थित रहने पर उसे जुर्माना अदा करना पड़ता था। अक्सर उसके वस्त्र जीर्ण-शीर्ण, फटे-पुराने होते और कभी-कभी उन्हें चीथड़ों से ही तन ढकना पड़ता था। अस्वास्थ्यकर भोजन और किराये के दड़बेनुमा, अंधेरे, सीलन और धूल भरे कमरों में उसे अपना जीवन गुजारना पड़ता था। उन श्रमिकों को बेहद एवं उबाऊ कार्य करना पड़ता और मनोरंजन का शायद ही कोई अवसर उनके जीवन में आता हो। अक्सर श्रमिकों को बेरोजगारी का शिकार भी बनना पड़ता था क्योंकि फैक्ट्री के मालिकों के लिए उनकी पत्नियां और बच्चे (अर्थात् महिला एवं बाल-श्रमिक) सस्ता पड़ते थे।

<u>औद्योगिकरण के लाभ</u> :-

दूसरी तरफ, नयी औद्योगिकरण प्रक्रिया के कारण अनेक फायदे भी रहे थे। उत्पादन में वृद्धि का सीधा तात्पर्य था धन-सम्पत्ति में वृद्धि। बेहतर भोज्य-सामग्री, बेहतर वस्त्र परिधान, बहते जल या गैस या विद्युत से प्रकाश एवं ताप की प्राप्ति के वैज्ञानिक देन तथा चिकित्सा के क्षेत्र में हुई तरक्की के कारण जीवन की सामान्य परिस्थिति आरामदेह हो गयी थी। मनुष्य अब तीव्र गति से यात्राएँ करने लगा था और खबरें तथा सूचनाएँ तत्काल भेजी पायी जा सकती थीं। पिछले वक्त में, मनुष्य द्वारा किये जाने वाले बेहद श्रमसाध्य कार्य, अब मशीनों द्वारा किये जाने लगे थे। लेकिन औद्योगिकरण के पहले और दूसरे दौर में, उपरोक्त सभी आराम एवं सुविधाएँ केवल धनी और सम्पन्न वर्ग को प्राप्त हो सका था न कि दैनिक मजदूरी पर निर्वाह करने वाले श्रमिकों को।

<u>आर्थिक उदारवाद</u> :- जिस रास्ते पर योरोप का आर्थिक जीवन विकसित और विस्तृत हो रहा था, तात्कालीन ब्रिटिश अर्थशास्त्री न केवल उसकी वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत कर रहे थे वरन् बौद्धिक सुरक्षा-समर्थन भी दे रहे थे। ऐसे विद्वानों अर्थशास्त्रियों के विचारों को "आर्थिक उदारवाद" कहा गया। वे सभी आदम स्मिथ की पुस्तक "वेल्थ ऑफ नेशन्स" में प्रस्तुत "हस्तक्षेप-मुक्त" (या लाइसेज फेयर) के सिद्धान्त से प्रभावित प्रेरित थे और इसी श्रृंखला में उन्होंने अपने विशिष्ट योगदान दिये। माल्थस ने "जनसंख्या का सिद्धान्त" प्रस्तुत किया कि जनसंख्या वृद्धि जितनी तीव्र से होती है भोजन पदार्थ की आपूर्ति में उतनी तीव्र वृद्धि नहीं होती अतः जनसंख्या पर नियंत्रण रखने वाले धनात्मक अवरोधक जैसे ब्रह्मचर्य का ताउम्र पालन और विवाह का त्याग। अतः गरीबों को, माल्थस ने कहा कि वे स्वयं अपनी गरीबी का कारण बनते हैं और विवाहित जीवन अपना कर ढेरों बच्चे उत्पन्न करते हैं। रिकार्डो नामक अर्थशास्त्री ने कहा कि जनसंख्या में हुई वृद्धि के साथ भूराजस्व में भी वृद्धि होती है

Scanned by TapScanner

क्योंकि मनुष्य अधिक उत्पन्न करने के लिए बंजर एवं ऊसर पड़ी जमीन को कृषि योग्य बनाने की कोशिश में लगने को बाध्य हो जाता है। रिकार्डो ने "मजदूरी के लौह नियम" भी प्रतिपादित किये कि मजदूरी हमेशा "महज जीवन निर्वाह" कर सकने योग्य का स्थिति और पतनोन्मुख प्रवृत्ति में गतिशील रहती है। फैक्ट्रियों-खानों एवं अन्य प्रतिष्ठानों में कार्य के घंटे प्रतिदिन पन्द्रह या सोलह से घटाकर कम न करने के पक्ष में नसाउ सीनियर ने अपनी अन्तर्राष्ट्रीय के स्तर तक यह स्पष्ट कर दिखाया कि कैसे इन्हीं "चौदह – पन्द्रह घन्टे प्रतिदिन" की बदौलत पूंजीपति अपनी चिरआकांक्षित पूंजीलाभ प्राप्त कर पाते हैं। मैक कैलोश ने एक "मजदूरी कोष" सिद्धान्त विकसित किया कि प्रत्येक देश में मजदूरों को देने के लिए एक निश्चित राशि होती है अतः यदि मजदूरों का कोई एक समूह अपनी मजदूरी बढ़वा लेने में सफल हो जाता है तो निश्चित रूप से एक समूह अपने श्रमिक समूहों के कुछ अन्य सदस्यों का वेतन भी वह प्राप्त कर लेता है। इसी बीच जेरेमी बेंथम ने सैद्धान्तिक प्रामाणिकता के स्तर में कहा कि हस्तक्षेप मुक्त नीति एवं आर्थिक उदारवाद के सिद्धान्तों को व्यावहारिक जीवन में आरोपित करने पर अधिकाधिक लोगों के अधिकतम लक्ष्यों की प्राप्ति सम्भव हो जायेगी।

इन ख्याति प्राप्त ब्रिटिश लेखकों –विचारकों द्वारा विकसित आर्थिक उदारवाद के विचारों ने वर्ष 1830 के दशक में सुगठित सैद्धान्तिक स्वरूप प्राप्त कर लिया। राजनीतिक उदारवाद की तरह इसमें भी व्यक्ति परक प्राथमिकताओं को केन्द्रीय महत्व दिया गया। अर्थात इस मान्यता को स्थापित किया कि व्यक्ति के हित स्वार्थ ही वे प्रेरक शक्तियाँ हैं जो आर्थिक जीवन को चलायमान रखती हैं। राजनीतिक उदारवाद की भाँति इसने भी व्यापार की स्वतंत्रता, अनुबन्ध की स्वतंत्रता, को प्रबल समर्थन दिया ताकि वो व्यक्तियों को, सरकार के हस्तक्षेप एवं नियंत्रण से पूर्णतः मुक्त होकर, प्रतिस्पर्धा करने की स्वतंत्रता प्राप्त रहे। अट्ठारहवीं शताब्दी के आर्थिक उदारवाद की केन्द्रीय मान्यता यह थी कि "आर्थिक जीवन कुछ निश्चित-निर्धारित" प्राकृतिक नियमों द्वारा प्रेरित – नियंत्रित एवं निर्धारित होता है। अतः अर्थशास्त्र के उन प्राकृतिक नियमों की क्रियाशीलता को रोक पाना तो मनुष्य के वश में नहीं है परन्तु वह उनके मार्ग में बाधाएं डाल सकता है। जिसके अवांछित नतीजे अवश्यम्भावी हैं अतः सर्वोत्तम स्थिति यही है कि सभी मानव निर्मित बाधाओं को दूर कर, उन "नियमों को स्वतः" क्रियाशील होने का अवसर उपलब्ध कराया जाए।

आर्थिक उदारवाद के सिद्धान्त के ढेरों अनुयायी मिल गये। औद्योगिक पूंजीपतियों को इस सिद्धान्त के अन्तर्गत लाभ कमाने और धनी होते जाने का औचित्य प्राप्त हो गया। अनेकों राजनेताओं ने इस सिद्धान्त की सच्चाई और वैधता में अपने विश्वास प्रकट किये। ग्रेट-ब्रिटेन में आर्थिक उदारवाद ने अपनी गहरी जड़ें जमाई किन्तु फ्रांस एवं जर्मनी में इसे कभी वैचारिक विजय न मिल सकी। अतः फ्रांस और जर्मनी के उद्योगपतियों ने अनेकों बार ब्रिटिश माल के आयात पर भारी चुंगी शुल्क लगाने और अपने सुरक्षा संरक्षण का पुराना इन्तजाम किये जाने की माँग की। कुल मिलाकर सम्पूर्ण योरोपीय महादेश के देशों ने कभी आर्थिक उदारवाद की नीतियों को पूरी इच्छाशक्ति से नहीं अपनाया जैसा ब्रिटेन ने अपनाया था।

आर्थिक उदारवाद के खिलाफ विरोध :

आर्थिक उदारवाद का सिद्धान्त एवं उसके सादृश्य परिस्थितियाँ जिनका निर्माण औद्योगिकरण की प्रक्रिया ने किया था वे निर्विवाद एवं निर्विरोध नहीं रह सकी। औद्योगिक श्रमिकों की दयनीय अवस्था एवं व्यथापूर्ण जीवनक्रम ने तात्कालीन अनेकों विद्वान को प्रेरित किया कि वे मौजूदा आर्थिक राजनीतिक व्यवस्था के बुनियादी सिद्धान्तों को प्रकल्पित करें, जैसे निजी सम्पति एवं लाभ कमाने के लिए निजी उद्यम। चूँकि इन विद्वानों विचारकों का चिन्तन मनन, आदर्शों की कल्पनाशील धारणाओं पर आधारित था अतः मौजूदा परिस्थिति की समस्याओं के समाधान के लिए ठोस कार्यक्रम की कोई योजना प्रस्तुत न कर सके। और इन विद्वानों विचारकों को आदर्शवादी या स्वप्नदर्शी समाजवादी (यूटोपियन शोसिलिस्ट) कहा जाने लगा। स्वप्नदर्शी समाजवादियों की प्रारंम्भिक जमात के एक महत्वपूर्ण विचारक फ्रांस के सेण्ट साइमन (1760-1825) थे। उन्होंने यह दलील प्रस्तुत की कि निजी सम्पति के वंशानुगत उत्तराधिकार को समाप्त कर दिया जाय। उनके अनुसार आदर्श सामाजिक व्यवस्था के निर्माण एवं क्रियाशीलता का सूत्र है-- "प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमता के अनुसार योगदान करे और प्रत्येक व्यक्ति को उसकी आवश्यकतानुसार आपूर्ति हो"।

एक फ्रॉसीसी विद्वान चार्ल्स फौरी ने यह समाधान प्रस्तुत किया कि सहकारी सहयोगी समुदायों के आधार पर एक नयी सामाजिक संगठन बनाया जाय जिसमें प्रत्येक समुदाय अपना भोज्य पदार्थ स्वयं उत्पादित करे और अपनी जरूरत की सामग्री का निर्माण भी स्वयं करें। स्वीटजरलैंड निवासी सिसमण्डी ने जोर दिया कि वस्तुओं का वितरण समानता के आधार पर किया जाय जो उतना ही न्यायपूर्ण हो जितना वस्तुओं के उत्पादन में हुई वृद्धि। एक जर्मन विद्वान फ्रेडरिकलिस्ट ने "शास्त्रीय" अर्थशास्त्रीय सिद्धान्तों में वर्णित "नियमों" के समक्ष प्रश्न उठाये, विशेषकर मुक्त व्यापार के सिद्धान्त के सन्दर्भ में। उसने इस बात पर जोर दिया कि आर्थिक नियम और नियंत्रण (जिसमें चुँगी-शुल्क सुरक्षा की व्यवस्था भी शामिल थी) का इस्तेमाल राष्ट्रीय विकास को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। एक अन्य फ्रॉसीसी विद्वान लुई ब्लैंक, व्यापक बेरोजगारी की स्थिति देखकर बेहद चिन्तित और हतप्रभ था अतः "बेरोजगार के अधिकार" या काम का अधिकार दिये जाने का उपदेश दिया और राज्य की गारन्टी के अधीन, फैक्ट्रियों को सहकारी आधार पर चलाये जाने का प्रस्ताव रखा। एक अन्य फ्रॉसीसी विद्वान जिन्हें "अराजकतावाद का जनक" भी कहा जाता है। जिन्होंने सम्पत्ति के निजी स्वामित्व के सभी प्रकारों को समाप्त करने की माँग की तथा प्रत्येक व्यक्ति को बिना सूद-ब्याज ऋण मुहैय्या कराये जाने का सुझाव दिया।

उपरोक्त स्वप्नदर्शी में से कोई भी, अपने समसामयिक सामाजिक, राजनीतिक परिस्थिति पर कोई प्रभाव डाल सकने में सर्वथा असफल रहे। फिर भी उन्होंने आर्थिक चिन्तन की एक ऐसी विचारधारा को जन्म दिया जिससे आगामी कालों में बेहद हलचल पैदा हुआ और वे आन्दोलन करने को तैयार हुए और ओजस्वी-शक्तिशाली समाजवाद का उदय हुआ। यह बाद्वाला समाजवादी विचार अधिकांशतः राज्य का समाजवादी स्वरूप था जिस पर कार्ल मार्क्स की छाप थी।